नईदुनिया

भोपाल, 06 नवम्बर 2026

संपादकीय

पोर्टल बंदः छात्रों के भविष्य से खिलवाड़

एक फर्जी सर्टिफिकेट और हजारों असली छात्रों का भविष्य दाँव पर

भोपाल में नर्सिंग रजिस्ट्रेशन का ऑनलाइन पोर्टल महीनों से बंद है और हजारों छात्र परेशान होकर भटक रहे हैं। काउंसिल के दफ्तर में बाबू तक यह जवाब नहीं दे पा रहे कि पोर्टल कब खुलेगा। यह कैसी व्यवस्था है? यह महज लापरवाही नहीं, छात्रों के भविष्य के साथ सीधा खिलवाड़ है। एक गड़बड़ी की आड़ में पूरे प्रदेश के छात्रों को बंधक क्यों बना दिया गया है?

बताया जा रहा है कि एक नाम से गलत तरीके से रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट जारी हो गया, इसलिए पूरा पोर्टल बंद कर दिया गया। यह कौन सा तर्क है? एक फर्जी प्रविष्टि को हटाने के लिए पूरे सिस्टम को बंद करना कहां तक उचित है? असली सवाल यह है कि विभाग के पास न तो तकनीकी समाधान है और न ही समस्या सुलझाने की इच्छा शक्ति। इस बंदी के कारण गड़बड़ियों की जांच और जवाबदेही भी सवालों के घेरे में है। जब पोर्टल ही बंद रहेगा तो पारदर्शिता कैसे आएगी और फर्जीवाड़े का पता कैसे चलेगा?

जरा सोचिए उन छात्रों पर क्या बीत रही होगी, जिन्होंने तीन-चार साल मेहनत की, लाखों रुपये फीस भरी, माता-पिता ने कर्ज लिया, खेत बेचे और अब नौकरी के समय उनके हाथ में पंजीयन प्रमाणपत्र नहीं है। बिना पंजीयन के अस्पतालों में नौकरी नहीं मिलती, सरकारी भर्ती के फॉर्म नहीं भर सकते और निजी अस्पताल भी काउंसिल का प्रमाणपत्र मांगते हैं। कई छात्रों के परिवार आर्थिक संकट झेल रहे हैं, लेकिन विभाग के अधिकारी महीनों से समस्या का समाधान नहीं कर पा रहे हैं। गलती व्यवस्था की और सजा छात्रों को, यह कैसा न्याय है? मध्य प्रदेश में नर्सिंग शिक्षा की बदहाली किसी से छिपी नहीं है। हाईकोर्ट भी फर्जी नर्सिंग कॉलेजों को लेकर सवाल उठा चुका है। कई कॉलेजों में न पर्याप्त शिक्षक हैं और न अस्पताल, फिर भी डिग्रियां बांटी जा रही हैं। अब एक फर्जी प्रमाणपत्र सामने आने पर पूरे पोर्टल को बंद कर देना कई गंभीर सवाल खड़े करता है। आखिर किसकी जिम्मेदारी तय हुई? किस अधिकारी या कर्मचारी की आईडी से प्रमाणपत्र जारी हुआ? जांच और कार्रवाई का खुलासा क्यों नहीं किया जा रहा? यदि विभाग पारदर्शी है तो दोषियों के नाम सार्वजनिक कर कार्रवाई करे। आज जब निजी संस्थान भी ऑनलाइन व्यवस्था संचालित कर रहे हैं, तब सरकारी नर्सिंग काउंसिल महीनों से अपना पोर्टल चालू नहीं कर पा रही है। यदि तकनीकी खराबी है तो विशेषज्ञों की मदद लेकर तत्काल सुधार किया जाना चाहिए। लेकिन पोर्टल बंद रखने का कोई ठोस कारण और समयसीमा सामने नहीं आना व्यवस्था की कार्यप्रणाली पर गंभीर सवाल खड़े करता है।

अब मुख्यमंत्री को सीधे हस्तक्षेप करना चाहिए। पंद्रह दिन के भीतर पोर्टल हर हाल में चालू कर लंबित पंजीयन प्रमाणपत्र जारी किए जाएं। जिस आईडी से फर्जी प्रमाणपत्र जारी हुआ, उससे जुड़े अधिकारी और कर्मचारी की जिम्मेदारी तय कर निलंबन और एफआईआर की कार्रवाई हो। संदिग्ध नर्सिंग कॉलेजों की जांच कर फर्जीवाड़ा मिलने पर मान्यता निरस्त की जाए और संचालकों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई हो। साथ ही, महीनों तक पोर्टल बंद रखने और छात्रों को परेशान करने वाले अधिकारियों की भी जवाबदेही तय हो। प्रदेश के अस्पतालों में पहले से ही नर्सों की कमी है। ऐसे में नई नर्सों को पंजीयन के अभाव में रोजगार से दूर रखना स्वास्थ्य व्यवस्था को और कमजोर करेगा। नर्स कोई फाइल नहीं, अस्पतालों की रीढ़ होती हैं। एक फर्जी प्रमाणपत्र की जांच के नाम पर हजारों योग्य छात्रों का भविष्य रोकना किसी भी स्थिति में उचित नहीं है। पोर्टल तत्काल शुरू हो और दोषियों को जवाबदेह बनाया जाए। यही छात्रों के साथ न्याय होगा।

आजकल

भोपाल में गैस कांडः उल्टा चोर कोतवाल को डांटे

दीपावली से पहले भोपाल में करीब 50 हजार परिवारों के चूल्हे ठंडे पड़े हैं। स्मार्ट सिटी कहलाने वाले शहर में अकेले कोलार के 20 हजार उपभोक्ता गैस सिलेंडर की किल्लत से जूझ रहे हैं। नर्मदापुरम रोड, संत नगर, गांधीनगर, भेल, अशोका गार्डन और बावड़िया में बुकिंग के बावजूद सिलेंडर नहीं मिल रहे। घरेलू गैस के व्यावसायिक उपयोग और कालाबाजारी के कारण आपूर्ति संकट गहराया है।

सबसे शर्मनाक पहलू यह है कि घरेलू सिलेंडर से गैस चोरी करते हुए एजेंसी के कर्मचारियों को कई बार पकड़ा जा चुका है। 27 अक्टूबर को कोलार में छापेमारी के दौरान 98 सिलेंडर और गैस ट्रांसफर करने की तीन मशीनें जब्त की गईं। सवाल है कि चोरी पकड़े जाने के बाद संबंधित एजेंसी का लाइसेंस निरस्त हुआ? संचालक पर एफआईआर दर्ज हुई? दोषियों को जेल भेजा गया? जवाब है, नहीं। उल्टा उपभोक्ताओं की आपूर्ति प्रभावित हो रही है। ऐशबाग के नवीन नगर में एक उपभोक्ता को बुकिंग के बाद भी सिलेंडर नहीं मिला और ई-केवाईसी अधूरी होने का हवाला दे दिया गया। ई-केवाईसी अब उपभोक्ताओं को परेशान करने का नया हथियार बन गई है। सवाल है कि जब आधार लिंक और सब्सिडी के लिए पहले ही सत्यापन हो चुका है, तो नई ई-केवाईसी के नाम पर आपूर्ति क्यों रोकी जा रही है? नियमों के अनुसार ई-केवाईसी नहीं होने पर भी गैस आपूर्ति बंद नहीं की जा सकती। त्योहार के समय सिलेंडर रोककर कालाबाजारी की आशंका को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। खाद्य विभाग और जिला प्रशासन की जवाबदेही तय होनी चाहिए। 98 सिलेंडर और मशीनें जब्त होने के बाद कार्रवाई का सार्वजनिक ब्योरा क्यों नहीं दिया गया? शिकायत के लिए उपभोक्ता आखिर जाएं कहां? तेल कंपनियां एजेंसी के पास भेजती हैं और एजेंसियां कर्मचारियों की गलती बताकर पल्ला झाड़ लेती हैं।

जिन एजेंसियों में गैस चोरी पकड़ी गई है, उनके लाइसेंस तत्काल निलंबित किए जाएं और वैकल्पिक व्यवस्था से आपूर्ति सुनिश्चित हो। दोषियों पर आपराधिक कार्रवाई हो तथा ई-केवाईसी के नाम पर सिलेंडर रोकने पर रोक लगे। हर सिलेंडर की डिजिटल ट्रैकिंग, वजन की पर्ची और डिलीवरी बॉय के पास तौल मशीन अनिवार्य की जाए। दीपावली पर सुरक्षा और यातायात के इंतजाम होते हैं, लेकिन घरों के चूल्हों की चिंता कौन करेगा? गैस सिलेंडर विलासिता नहीं, रोटी का साधन है। रोटी रोकने वालों पर कार्रवाई होनी चाहिए, रोटी मांगने वालों पर नहीं।

ट्रंप को जनता का झटका, अमेरिकी राजनीति से दुनिया की अर्थव्यवस्था तक बदले समीकरण

अपूर्व तिवारी

- **मध्यावधि चुनाव में डेमोक्रेटिक पार्टी की बड़ी जीत, महंगाई और ईरान युद्ध बना रिपब्लिकन हार का कारण**
- **भारत के शेयर बाजार में उछाल, कच्चे तेल में गिरावट और सोने में तेजी, जेडी वेंस की राजनीतिक मुश्किलें भी बढ़ीं**



अमेरिका के मध्यावधि चुनावों ने राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की राजनीति के सामने एक ऐसी चुनौती खड़ी कर दी है, जिसका असर केवल वाशिंगटन की सत्ता के गलियारों तक सीमित नहीं रहने वाला। प्रतिनिधि सभा और सीनेट, दोनों पर डेमोक्रेटिक पार्टी का नियंत्रण स्थापित होना इस बात का संकेत है कि अमेरिकी मतदाता अब राष्ट्रपति की नीतियों और फैसलों पर संसद के माध्यम से अंकुश चाहते हैं। ट्रंप के दूसरे कार्यकाल के अभी दो वर्ष शेष हैं, लेकिन चुनाव परिणामों ने उनके राजनीतिक प्रभाव, निर्णय लेने की स्वतंत्रता और 2028 के बाद की रिपब्लिकन राजनीति को लेकर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। यह हार इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि डेमोक्रेटिक पार्टी ने उन राज्यों और क्षेत्रों में भी उल्लेखनीय सफलता हासिल की है, जिन्हें लंबे समय से रिपब्लिकन पार्टी का मजबूत गढ़ माना जाता रहा है।

इस चुनाव को समझने के लिए अमेरिकी मतदाता की रोजमर्रा की परेशानियों को देखना होगा। चुनावी सभाओं में राष्ट्रवाद, सीमा सुरक्षा और विदेश नीति के बड़े दावे अपनी जगह थे, लेकिन मतदान केंद्र तक पहुंचते समय मतदाता के सामने महंगाई, किराने के सामान की कीमत, पेट्रोल और घरेलू खर्च जैसे सवाल अधिक महत्वपूर्ण थे। ट्रंप प्रशासन की टैरिफ नीति से आयातित वस्तुओं की कीमतों पर दबाव बढ़ा और ईरान के साथ युद्ध ने ऊर्जा बाजार को अस्थिर कर दिया। तेल की आपूर्ति प्रभावित होने से ईंधन महंगा हुआ और उसका असर परिवहन से लेकर खाद्य पदार्थों तक दिखाई दिया। रिपब्लिकन नेतृत्व इन परेशानियों का संतोषजनक जवाब नहीं दे पाया। यही कारण है कि ट्रंप के प्रति व्यक्तिगत निष्ठा रखने वाले मतदाताओं के एक हिस्से ने भी इस बार डेमोक्रेटिक उम्मीदवारों का साथ दिया। युवा और अश्वेत मतदाताओं के साथ एशियाई तथा लैटिन अमेरिकी मूल के मतदाताओं का रुझान भी चुनावी परिणामों में महत्वपूर्ण रहा।

ईरान युद्ध इस राजनीतिक बदलाव का सबसे बड़ा कारण बनकर उभरा है। ट्रंप ने सैन्य कार्रवाई को अमेरिकी हितों की रक्षा के लिए जरूरी बताया था, लेकिन युद्ध के आर्थिक और रणनीतिक परिणामों ने उनके दावों को कमजोर किया। उपराष्ट्रपति जेडी वेंस ने भी सार्वजनिक रूप से स्वीकार किया कि ईरान युद्ध के कारण 2024 में ट्रंप का समर्थन करने वाले कुछ मतदाता रिपब्लिकन पार्टी से दूर हुए। उन्होंने यहां तक कहा कि पार्टी की हार की बड़ी वजह युद्ध ही है। यह टिप्पणी इसलिए महत्वपूर्ण है कि वेंस को ट्रंप के संभावित राजनीतिक उत्तराधिकारी और 2028 के राष्ट्रपति चुनाव के दावेदार के रूप में देखा जा रहा है। युद्ध को लेकर उनकी असहमति और ट्रंप की नीति के बीच उभरता अंतर रिपब्लिकन पार्टी के भीतर संभावित नेतृत्व संघर्ष की ओर संकेत करता है। पार्टी के कुछ नेताओं ने रक्षा मंत्री पीट हेगसेथ की भूमिका पर भी सवाल उठाए हैं। उनका आरोप है कि अमेरिका को युद्ध में तो झोंक दिया गया, लेकिन उससे बाहर निकलने की स्पष्ट रणनीति तैयार नहीं की गई। रिपब्लिकन पार्टी के सामने अब केवल चुनावी हार की समीक्षा करने का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह तय करने की चुनौती भी है कि वह ट्रंप की नीतियों के साथ किस सीमा तक खड़ी रहे। ट्रंप ने हार के बाद ईरान युद्ध के प्रभाव को स्वीकार तो किया, लेकिन यह भी कहा कि अवसर मिलने पर वह वही निर्णय दोहराएंगे। इससे स्पष्ट है कि वे अपनी नीति को गलत मानने के लिए तैयार नहीं हैं। दूसरी ओर, पार्टी के भीतर उठती आवाजें बताती हैं कि नेतृत्व के प्रति अटूट समर्थन की स्थिति बदल रही है। आने वाले दिनों में यह मतभेद और गहरा सकता है, विशेषकर तब जब 2028 के राष्ट्रपति चुनाव की तैयारी शुरू होगी।

कांग्रेस के दोनों सदनों पर डेमोक्रेटिक नियंत्रण का अर्थ है कि ट्रंप प्रशासन को अब अपने हर बड़े फैसले के लिए अधिक राजनीतिक और संस्थागत चुनौती का सामना करना पड़ेगा। डेमोक्रेट प्रशासन के कामकाज, सरकारी खर्च, नियुक्तियों और राष्ट्रपति के करीबियों से जुड़े मामलों की जांच कर सकते हैं। सीनेट में बहुमत होने से वे महत्वपूर्ण नियुक्तियों को रोकने की स्थिति में भी होंगे। प्रतिनिधि सभा में डेमोक्रेटिक नेता हकीम जेफ्रीज स्पीकर बनते हैं तो वह इस पद पर पहुंचने वाले पहले अश्वेत नेता होंगे। हालांकि, राष्ट्रपति के वीटो को निष्प्रभावी करने के लिए दोनों सदनों में दो-तिहाई बहुमत आवश्यक है, इसलिए ट्रंप के पास भी संवैधानिक अधिकार बने रहेंगे। परिणामस्वरूप अमेरिका में विधायी गतिरोध और राजनीतिक टकराव बढ़ने की आशंका है।

इस बदलाव का प्रभाव रूस-यूक्रेन युद्ध पर भी पड़ सकता है। यूक्रेन के राष्ट्रपति वोलोदिमिर जेलेंस्की ने डेमोक्रेटिक जीत का स्वागत करते हुए उम्मीद जताई है कि इससे रूस पर दबाव बढ़ेगा और यूक्रेन को अमेरिकी सहायता जारी रखने का रास्ता मजबूत होगा। ट्रंप प्रशासन रूस के साथ बातचीत और युद्ध समाप्त करने की दिशा में अपने तरीके से आगे बढ़ना चाहता रहा है, जबकि डेमोक्रेटिक नेतृत्व रूस के प्रति अधिक सख्त रुख का समर्थक रहा है। अब कांग्रेस में डेमोक्रेटिक बहुमत से यूक्रेन को सैन्य और आर्थिक सहायता के फैसलों पर उनका प्रभाव बढ़ सकता है। हालांकि, युद्ध का भविष्य केवल अमेरिकी संसद से तय नहीं होगा, लेकिन वाशिंगटन की बदली राजनीतिक परिस्थितियां रूस और यूक्रेन दोनों की रणनीति को प्रभावित कर सकती हैं। भारत के लिए अमेरिकी चुनावों का महत्व राजनीतिक संबंधों से आगे बढ़कर अर्थव्यवस्था तक जाता है। अमेरिका भारत का प्रमुख व्यापारिक साझेदार है और ट्रंप की टैरिफ नीति ने भारतीय निर्यातकों के सामने अनिश्चितता पैदा की थी। ईरान युद्ध के कारण कच्चे तेल की कीमतों में उछाल ने भारत जैसे बड़े आयातक देश की चिंता बढ़ाई। चुनाव परिणामों के बाद युद्ध समाप्त होने की उम्मीद और ऊर्जा बाजार में नरमी से भारतीय बाजारों को राहत मिली। पांच नवंबर को भारतीय शेयर बाजार में लगभग सात महीने की सबसे बड़ी एकदिनी तेजी दर्ज की गई। सेंसेक्स और निफ्टी में लगभग 2.4 प्रतिशत की बढ़त रही। विदेशी निवेशकों की वापसी और कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट ने इस तेजी को सहारा दिया। यह प्रतिक्रिया बताती है कि अमेरिकी राजनीति में होने वाला बदलाव भारतीय निवेशकों और वैश्विक पूंजी के फैसलों को कितनी तेजी से प्रभावित कर सकता है।

भारत की चिंता का एक बड़ा कारण ऊर्जा सुरक्षा है। देश अपनी जरूरत का लगभग 90 प्रतिशत कच्चा तेल आयात करता है। पश्चिम एशिया में युद्ध या समुद्री मार्गों पर संकट पैदा होने से भारत का आयात बिल, महंगाई और रुपये की स्थिति प्रभावित होती है। चुनाव के बाद ब्रेंट क्रूड की कीमत में एक दिन में लगभग नौ प्रतिशत की गिरावट आई और यह करीब 95 डॉलर प्रति बैरल के आसपास पहुंच गया। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए राहत की उम्मीद बनी है, हालांकि युद्ध समाप्त होने की कोई निश्चितता नहीं है। सोने के बाजार में इसके उलट तेजी दिखाई दी। डॉलर कमजोर होने और निवेशकों की सुरक्षित निवेश की ओर बढ़ती प्रवृत्ति के कारण अंतरराष्ट्रीय बाजार में सोना फिर चार हजार डॉलर प्रति औंस के ऊपर पहुंच गया। इससे स्पष्ट है कि राजनीतिक बदलाव के बावजूद वैश्विक बाजार अभी अनिश्चितता से मुक्त नहीं हुए हैं।

अमेरिका में भारतीय मूल के उम्मीदवारों की सफलता भी इस चुनाव का महत्वपूर्ण पक्ष रही। रो खन्ना, अमी बेरा, प्रमिला जयपाल, सुहास सुब्रमण्यम और पिया दांडिया जैसे नेताओं की जीत ने अमेरिकी राजनीति में भारतीय मूल के समुदाय की बढ़ती भागीदारी को रेखांकित किया। अरुणा मिलर सहित विभिन्न राज्यों में भारतीय मूल के प्रतिनिधियों की सफलता भी उल्लेखनीय रही, जबकि ओहायो के गवर्नर पद पर विवेक रामास्वामी को हार का सामना करना पड़ा। यह परिणाम बताता है कि भारतीय मूल के अमेरिकी अब केवल प्रभावशाली मतदाता समुदाय नहीं, बल्कि नीति और सत्ता निर्माण में सक्रिय भागीदार बन रहे हैं।

अमेरिकी मतदाताओं ने इस चुनाव में ट्रंप को सत्ता से हटाया नहीं है, लेकिन उनकी सत्ता की सीमाएं जरूर तय कर दी हैं। यह लोकतांत्रिक व्यवस्था की उस भूमिका का उदाहरण है, जिसमें जनता चुनाव के माध्यम से सरकार को उसके फैसलों का हिसाब देती है। डेमोक्रेटिक पार्टी के सामने अब अपनी जीत को जनहित के ठोस परिणामों में बदलने की जिम्मेदारी है, जबकि ट्रंप को यह तय करना होगा कि वे बदली हुई संसद के साथ सहयोग का रास्ता अपनाते हैं या टकराव को और बढ़ाते हैं। इस चुनाव का वास्तविक महत्व इसी में है कि इसका असर अमेरिकी राजनीति के साथ विश्व कूटनीति, ऊर्जा बाजार और भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं पर भी लंबे समय तक दिखाई दे सकता है।

भारत की एक सुई, दुनिया के लिए नई जिंदगी की उम्मीद

साल में दो इंजेक्शन, एचआईवी से बचाव की दिशा में बड़ी क्रांति

जब चालीस डॉलर की दवा ने अट्ठाईस हजार डॉलर के घमंड को हराया

अमेरिका के लुईविल से आई एक खबर ने पूरी दुनिया के स्वास्थ्य विशेषज्ञों को नई उम्मीद दी है। भारत में बनी एचआईवी रोकथाम की जेनेरिक दवा लेनाकापाविर को अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (एफडीए) की मंजूरी मिली है। इसकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसे साल में केवल दो बार इंजेक्शन के रूप में लगवाना होता है। यह एचआईवी संक्रमण से बचाव की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह सिर्फ एक दवा की मंजूरी नहीं, बल्कि इस बात का प्रमाण है कि भारत अब दुनिया को सस्ती और प्रभावी दवाएं उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

अब तक एचआईवी से बचाव के लिए प्री-एक्सपोजर प्रोफिलैक्सिस यानी प्रेप के तहत रोज एक गोली खानी पड़ती थी। लेकिन नियमित रूप से दवा लेना हर किसी के लिए आसान नहीं होता। कई लोग गोली लेना भूल जाते हैं, तो कई सामाजिक संकोच के कारण नियमित दवा नहीं ले पाते। खेतों, कारखानों और दूसरे कामकाजी क्षेत्रों में व्यस्त रहने वाले लोगों के लिए भी रोज दवा लेना चुनौतीपूर्ण होता है। लेनाकापाविर ने इस समस्या का एक नया समाधान प्रस्तुत किया है। यह इंजेक्शन त्वचा के नीचे लगाया जाता है और लगभग छह महीने तक संक्रमण से सुरक्षा प्रदान करता है। इस तरह साल में दो इंजेक्शन के माध्यम से लगातार बचाव संभव हो सकता है। दो बड़े वैश्विक अध्ययनों में इसके परिणाम बेहद प्रभावी पाए गए और इंजेक्शन लेने वाले लोगों में नए संक्रमण लगभग न के बराबर रहे।

इसी दवा का मूल रूप अमेरिका में येजटुगो नाम से उपलब्ध है, जिसे गिलियड साइंसेज ने विकसित किया है। इसकी कीमत चौंकाने वाली है। साल भर के उपचार की कीमत करीब अट्ठाईस हजार डॉलर यानी भारतीय मुद्रा में लगभग चौबीस लाख रुपये बताई जाती है। इतनी महंगी दवा दुनिया के अधिकांश लोगों की पहुंच से बाहर है। खासकर अफ्रीका और एशिया के गरीब देशों के लिए यह बड़ी चुनौती है। दूसरी ओर, भारत की डॉ. रेड्डीज लैबोरेटरीज ने यूनिटएड, क्लिंटन हेल्थ एक्सेस इनिशिएटिव और विट्स आरएचआई के सहयोग से इसका जेनेरिक संस्करण तैयार करने की पहल की है। इसकी सालाना कीमत लगभग चालीस डॉलर यानी करीब साढ़े तीन हजार रुपये रखने का लक्ष्य है। एक ही दवा की कीमत में इतना बड़ा अंतर वैश्विक स्वास्थ्य व्यवस्था की असमानता को उजागर करता है। यही वह जगह है, जहां भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। यह पहली बार नहीं है, जब भारत ने दुनिया को सस्ती दवाएं उपलब्ध कराई हैं। टीबी, कैंसर और कोरोना जैसी बीमारियों के उपचार में भारतीय दवा उद्योग पहले भी महत्वपूर्ण योगदान दे चुका है। लेकिन लेनाकापाविर के मामले में उपलब्धि इसलिए विशेष है क्योंकि अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन जैसी सख्त नियामक संस्था से मंजूरी मिलना गुणवत्ता और सुरक्षा के मानकों पर भरोसे को मजबूत करता है। इससे निम्न और मध्यम आय वाले देशों में इस दवा की उपलब्धता बढ़ाने का रास्ता खुल सकता है। करीब 120 देशों तक इसकी पहुंच बनाने की योजना है। भारत के वैज्ञानिकों और दवा उद्योग की यह क्षमता देश को वैश्विक स्वास्थ्य क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाती है।



दुनिया में आज भी कई देश ऐसे हैं, जहां एचआईवी की जांच और उपचार की सुविधाएं आसानी से उपलब्ध नहीं हैं। अस्पताल दूर हैं, स्वास्थ्यकर्मियों की कमी है और दवाओं की आपूर्ति भी कई बार बाधित होती है। ऐसे में संक्रमण को रोकना सबसे प्रभावी उपाय साबित हो सकता है। साल में दो बार इंजेक्शन वाला मॉडल इन देशों के लिए विशेष रूप से उपयोगी हो सकता है। स्वास्थ्यकर्मी नियमित अंतराल पर गांवों और दूरदराज के क्षेत्रों में शिविर लगाकर पात्र लोगों को इंजेक्शन दे सकते हैं। लोगों को रोज दवा लेने के लिए अस्पताल जाने की जरूरत नहीं होगी। इससे समय और संसाधनों की बचत होगी तथा संक्रमण के खतरे को कम करने में मदद मिलेगी। हम अक्सर बीमारी होने के बाद इलाज की बात करते हैं, लेकिन बेहतर स्वास्थ्य व्यवस्था वह है जो बीमारी को रोकने पर भी उतना ही ध्यान दे। एचआईवी संक्रमण होने के बाद व्यक्ति को जीवनभर नियमित उपचार की आवश्यकता होती है। इसके साथ आर्थिक और मानसिक चुनौतियां भी जुड़ी रहती हैं। ऐसे में किफायती और प्रभावी रोकथाम उपलब्ध होना बड़ी उपलब्धि है। लेनाकापाविर इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। हालांकि, इसका उपयोग निर्धारित चिकित्सकीय सलाह और समय-सारणी के अनुसार ही किया जाना चाहिए।

भारत सहित दुनिया के अनेक देशों में आज भी एचआईवी को लेकर सामाजिक संकोच और भेदभाव मौजूद है। लोग इसके बारे में खुलकर बात करने से बचते हैं। इसी कारण कई लोग जांच और रोकथाम के उपाय अपनाने से भी हिचकते हैं। हमें समझना होगा कि एचआईवी एक वायरस से होने वाला संक्रमण है, इसे किसी व्यक्ति के चरित्र से जोड़कर देखना गलत है। जिस तरह दूसरी बीमारियों से बचाव के लिए सावधानियां अपनाई जाती हैं, उसी तरह एचआईवी से बचाव के वैज्ञानिक उपायों को भी सहजता से स्वीकार करना चाहिए। सरकार और समाज दोनों को इस दिशा में जागरूकता बढ़ानी होगी। एफडीए की मंजूरी मिलना महत्वपूर्ण उपलब्धि जरूर है, लेकिन असली चुनौती इस दवा को जरूरतमंद लोगों तक पहुंचाने की होगी। इसके लिए सुरक्षित भंडारण, प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मियों और नियमित आपूर्ति की व्यवस्था जरूरी है। लोगों को इंजेक्शन की निर्धारित अवधि और सही उपयोग के बारे में जानकारी देनी होगी। नकली दवाओं से बचाव और गुणवत्ता की निगरानी भी महत्वपूर्ण होगी। भारत सरकार और वैश्विक स्वास्थ्य संस्थाओं को मिलकर ऐसी व्यवस्था बनानी होगी, जिससे दूरदराज के क्षेत्रों तक भी यह दवा पहुंच सके।

भारत ने जेनेरिक दवाओं के माध्यम से दुनिया के अनेक देशों में उपचार को किफायती बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जब कोई दवा चौबीस लाख रुपये के बजाय कुछ हजार रुपये में उपलब्ध कराने की दिशा में कदम बढ़ाती है तो उसका लाभ केवल आर्थिक नहीं होता, बल्कि लाखों लोगों के लिए स्वास्थ्य सुरक्षा की उम्मीद भी पैदा होती है। यही भारत की फार्मेसी ऑफ द वर्ल्ड वाली पहचान की असली ताकत है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि यदि एचआईवी संक्रमण के जोखिम वाले अधिक से अधिक लोगों तक प्रभावी रोकथाम के उपाय पहुंचाए जाएं तो नए संक्रमणों में बड़ी कमी लाई जा सकती है। वर्ष 2030 तक एचआईवी महामारी को सार्वजनिक स्वास्थ्य के खतरे के रूप में समाप्त करने का वैश्विक लक्ष्य भी इसी सोच पर आधारित है। इसके लिए जांच, जागरूकता, उपचार और रोकथाम के सभी उपायों को साथ लेकर चलना होगा।

भारत में बनी जेनेरिक लेनाकापाविर की कहानी बताती है कि विज्ञान की सबसे बड़ी उपलब्धि तभी सार्थक होती है, जब उसका लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुंचे। अट्ठाईस हजार डॉलर की महंगी दवा और चालीस डॉलर में उपलब्ध होने की संभावना के बीच का अंतर केवल कीमत का नहीं, बल्कि स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंच का भी है। अब जरूरत है कि यह दवा जल्द से जल्द उन देशों और लोगों तक पहुंचे, जिन्हें इसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। भारत ने एक बार फिर दुनिया को उम्मीद की एक नई किरण दिखाई है। आखिरकार, हर रोका गया संक्रमण एक जिंदगी को सुरक्षित बनाने की दिशा में कदम है और हर जिंदगी अनमोल है। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**

फ्री बस सेवा से बढ़ी महिलाओं की भागीदारी, आर्थिक आजादी का नया सफर

सफर से सशक्तीकरण तक की कहानी अब देश के सामने एक नए रूप में उभर रही है। वित्त मंत्रालय की ताजा मासिक रिपोर्ट में एक महत्वपूर्ण तथ्य सामने आया है कि जब महिलाओं को सस्ता और सुरक्षित परिवहन उपलब्ध कराया गया तो रोजगार में उनकी भागीदारी बढ़ी। रिपोर्ट बताती है कि परिवहन के विभिन्न साधनों के विकास के बावजूद भारतीय महिलाओं के एक बड़े वर्ग के लिए घर से कार्यस्थल तक पहुंचना आज भी आसान नहीं है। यही वजह है कि रोजगार से जुड़ी कई महिलाएं शाम चार बजे तक अपने घर लौटने के लिए निकल जाती हैं, जबकि शाम छह बजे के बाद काम करने वाली महिलाओं की संख्या अपेक्षाकृत कम है।

रिपोर्ट के आंकड़े बताते हैं कि केवल 42 प्रतिशत महिलाएं काम के लिए एक किलोमीटर या उससे अधिक की दूरी तय करती हैं, जबकि पुरुषों में यह आंकड़ा 62 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में 65 प्रतिशत महिलाएं पैदल काम पर जाती हैं, वहीं शहरी क्षेत्रों में 37.5 प्रतिशत महिलाएं काम पर जाने के लिए ऑटो या बस का इस्तेमाल करती हैं। केरल में रोजगार के लिए आने-जाने वाली सबसे अधिक 47 प्रतिशत महिलाएं बस का उपयोग करती हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि काम पर आने-जाने में लगने वाला समय कम हो तो महिलाएं अधिक समय तक काम कर सकती हैं। देश के कई राज्यों में नगर बस सेवा की पर्याप्त सुविधा नहीं होने के कारण महिलाओं को परेशानी का सामना करना पड़ता है।

वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार, महिलाएं विभिन्न कारणों से पुरुषों की तुलना में रोजगार के लिए कम दूरी तय करती हैं। यही वजह है कि उनके आने-जाने पर प्रतिमाह औसतन 533 रुपये खर्च होते हैं, जबकि पुरुषों का औसत खर्च 674 रुपये है। महिलाएं अक्सर घर के नजदीक उपलब्ध रोजगार को प्राथमिकता देती हैं। आर्थिक सर्वेक्षण में भी महिलाओं के आवागमन की पूरी प्रक्रिया में लगने वाले अधिक समय को उनकी रोजगार संबंधी सीमाओं का एक महत्वपूर्ण कारण माना गया है। सुरक्षित परिवहन के साधन आसानी से उपलब्ध नहीं होने पर महिलाओं को महंगे विकल्प अपनाने पड़ते हैं। मेट्रो का जाल देशभर में फैल रहा है, लेकिन मेट्रो महिलाओं को एक निश्चित स्थान तक ही पहुंचा पाती है। वहां से कार्यस्थल तक पहुंचने के लिए उन्हें ऑटो या अन्य साधनों का सहारा लेना पड़ता है। आवागमन का यही अंतिम एक किलोमीटर सबसे महंगा और कई बार असुरक्षित साबित होता है। इसी कारण अनेक महिलाएं शाम होने से पहले ही घर लौट आती हैं। जिन राज्यों में महिलाओं के लिए मुफ्त बस सेवा शुरू की गई है, वहां दो बड़े बदलाव देखने को मिले हैं। पहला, महिलाओं ने रोजगार के लिए अधिक दूरी तय करना शुरू किया है और दूसरा, उन्होंने शाम के बाद भी काम करने का साहस दिखाया है। पहले जो महिला ऑटो का किराया बचने पर ही काम पर जाने के बारे में सोचती थी, अब मुफ्त बस सेवा के कारण नए कौशल सीखने और रोजगार के अतिरिक्त अवसर तलाशने में सक्षम हो रही है। इसका असर उनकी आय के साथ आत्मविश्वास पर भी पड़ा है। मुंबई के सर्वेक्षण के हवाले से रिपोर्ट में बताया गया है कि जिन स्थानों पर मुफ्त बस सेवा शुरू हुई, वहां महिलाओं की आवागमन संबंधी स्थिति में उल्लेखनीय बदलाव आया। फ्री बस सेवा केवल किराया बचाने की योजना नहीं है, बल्कि महिलाओं को सुरक्षित आवागमन का भरोसा देने का माध्यम भी है। जब सार्वजनिक परिवहन के साधन सस्ते और सुरक्षित होते हैं तो महिलाएं अधिक समय तक काम कर सकती हैं। बस में अन्य महिला यात्रियों की मौजूदगी, जिम्मेदार चालक और बेहतर सुरक्षा व्यवस्था उनके मन में भरोसा पैदा करती है। हालांकि, केवल मुफ्त यात्रा की सुविधा देना पर्याप्त नहीं है। इसके साथ बसों की संख्या बढ़ाना, नियमित संचालन सुनिश्चित करना और महिला कंडक्टरों की नियुक्ति जैसे कदम भी जरूरी हैं। ग्रामीण और शहरी महिलाओं की परिवहन संबंधी समस्याएं अलग-अलग दिखाई देती हैं, लेकिन उनकी जड़ एक ही है। ग्रामीण क्षेत्रों में 65 प्रतिशत तक महिलाएं पैदल काम पर जाती हैं, क्योंकि उनके पास परिवहन के पर्याप्त साधन नहीं हैं। शहरों में महिलाएं ऑटो या बस का इस्तेमाल तो करती हैं, लेकिन भीड़, अनियमित सेवा और सुरक्षा की चिंता उनकी मुश्किलें बढ़ाती है। गांवों में सड़क और बस सेवा का अभाव है तो शहरों में उपलब्ध परिवहन व्यवस्था महिलाओं की जरूरतों के अनुरूप पर्याप्त नहीं है। इसलिए मुफ्त बस सेवा के साथ परिवहन के बुनियादी ढांचे को भी मजबूत करना होगा। महिलाओं की रोजगार में भागीदारी बढ़ाने के लिए मुफ्त बस सेवा का विस्तार केवल कुछ शहरों तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि इसे हर जिले तक पहुंचाने की जरूरत है। बस स्टॉप से कार्यस्थल तक के अंतिम एक किलोमीटर के सफर को सुरक्षित बनाने के लिए ई-रिक्शा और पिंक ऑटो जैसी सेवाएं शुरू की जा सकती हैं, जिनमें महिला चालक हों और किराये का भार सरकार